इकाई 5 निर्णयन प्रक्रिया तथा समस्या समाधान

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 निर्णयन प्रक्रिया

5.3.1 निर्णयः इसकी प्रकृति

5.3.2 निर्णयन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक

5.3.3 निर्णयन प्रक्रिया की अवस्थाएँ

5.4 निर्णयन सम्बन्धी व्यवहार के पोषण में अध्यापक की भूमिका

5.5 समस्या–समाधान

5.5.1 समस्या–समाधान प्रक्रिया के चरण

5.5.2 समस्या–समाधान सम्बन्धी व्यवहार के पोषण में अध्यापक की भूमिका

5.6 सारांश

5.7 इकाई के अंत में अभ्यास

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.9 उपयोगी पाठ्य सामग्री

5.1 प्रस्तावना

पिछले खंड में हमने जीवन के उद्देश्य और प्रयोजनों पर चर्चा की। जीवन में हमें विभिन्न स्थितियों में बहुत सारे निर्णय लेने पड़ते हैं। लिए गए ये निर्णय हमारे सम्मुख आने वाली समस्याओं के समाधान में सहायता करते हैं। हम निरंतर रूप से अन्य व्यक्तियों, स्थितियों तथा परिस्थितियों के साथ अन्योन्यक्रिया करते रहते हैं, और ऐसा करते हुए हमारे सामने विभिन्न प्रकार की बाधाएँ आती हैं। यह अनिवार्य है कि हम इन बाधाओं से निपटना सीखें तथा इस प्रकार आई समस्या का समाधान करना सीखें।

इस इकाई में हम व्यक्तियों की निर्णय करने की क्षमता को समझने का प्रयास करेंगे। इसके अतिरिक्त, हम उन तरीकों की विवेचना भी करेंगे जिनका उपयोग हम स्थिति को समझने और उसका हल ढूँढ़ते समय करते हैं। इसमें वे विधियाँ शामिल हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति स्थिति का विश्लेषण करता है और स्थिति तथा दूसरे व्यक्तियों के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का उत्तरदायित्व लेता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

- निर्णयन की अवधारणा और इसकी प्रक्रिया की विवेचना कर सकेंगे;
- अपने अनुभवों का प्रयोग कर स्थिति तथा व्यक्तियों के प्रति सुग्राहिता का विकास कर सकेंगे;
- समस्या–समाधान के लिए बच्चों में स्वतंत्र चिंतन की क्षमता का विकास कर सकेंगे; और
- समस्या–समाधान सम्बन्धी व्यवहार की अवधारणा तथा प्रक्रिया की व्याख्या कर सकेंगे।

5.3 निर्णयन प्रक्रिया

आइए, निम्नलिखित कथनों की जाँच करें:

- एक कम्प्यूटर विशेषज्ञ की तुलना में मैं एक अध्यापक बनना अधिक पसंद करता हूँ।
- सैंडविच की बजाय मुझे मिठाई खाना अधिक अच्छा लगता है।
- जब प्रो. शर्मा पढ़ाते हैं तो मैं विषय को अच्छी प्रकार समझ जाता हूँ।
- मेरे लिए यह शादी करने का उपयुक्त समय है।
- मुझे ईमानदार तथा कर्मठ लोग पसंद हैं।
- मैंने अपने विवाह का दायित्व अपने माता–पिता को सौंप दिया है।
- मेरे सहकर्मी यदि संतुष्ट हों तो वे बेहतर काम करते हैं, अतः मैं यह सुनिश्चित करता हूँ कि उनकी नियमित वार्षिक वेतन वृद्धि समय पर दे दी जाए।
- मैं हमेशा इस बात पर बल देता हूँ कि रविवार के दिन अपने परिवार के साथ रहूँ और उनके साथ अच्छा समय बिताऊँ।

ये कथन किसी व्यक्ति की विभिन्न स्थितियों में निर्णय लेने की क्षमता को बताते हैं। ये निर्णय व्यक्ति के अस्तित्व को अर्थ प्रदान करते हैं क्योंकि उसके चिंतन की स्पष्टता, उसका आत्मविश्वास और स्थिति को आँकने की योग्यता विभिन्न भूमिकाओं और परिस्थितियों में उसका उत्तरदायित्व समझने में उसकी सहायता करती है।

सभी मनुष्यों में स्वाभाविक रूप से चयन करने की योग्यता विद्यमान होती है। यह योग्यता जंतुओं में भी होती है, जो उन्हें प्राकृतिक रूप से मिली है, परंतु जंतुओं की तुलना में मनुष्यों में यह चिंतन करने की योग्यता बहुत अधिक पाई जाती है, क्योंकि अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए विभिन्न विकल्पों को परखने की प्रक्रिया में वे सर्जनात्मकता का प्रयोग करते हैं। वे स्थिति और उसके प्रति अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी होते हैं। निस्संदेह, चयनाधिकार का प्रयोग जन्तु भी करते हैं परंतु वह लगभग मूल प्रवृत्ति के स्तर पर ही ऐसा कर पाते हैं। उनके पास बहुत अधिक विकल्प नहीं होते हैं। दूसरी ओर मनुष्य स्थितियों पर चिंतन करते हैं, निर्णय लेते हैं, और या तो स्थिति को अपने अनुकूल बना लेते हैं अथवा स्थिति के अनुसार स्वयं ढल जाते हैं।

5.3.1 निर्णयः इसकी प्रकृति

निर्णय दो या अधिक विकल्पों में से एक विकल्प को चुनने की प्रक्रिया होती है। यदि आपके पास मात्र एक ही विकल्प उपलब्ध है तो आपको कोई निर्णय नहीं लेना पड़ता है। निर्णय लेने का अर्थ है एक ऐसे नतीजे पर पहुँचना जिससे अनिश्चितता या विवाद समाप्त हो जाए।

"निर्णय" की संकल्पना को कुछ व्यापक आयाम देने के लिए एक विशिष्ट या प्रतिनिधिक विश्वकोश निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग कर सकता है जैसेः समायोजन, समझौता, व्यवस्था, चयन, मध्य मार्ग, घोषणा, निश्चय, निष्पत्ति, प्राथमिकता/वरीयता, उपशमन, परिणाम तथा अभिनिर्णय। मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से व्यक्तिगत निर्णय उन आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं तथा मूल्यों के समूह के संदर्भ में लिए जाते हैं जिन्हें वे व्यक्ति ढूँढ़ना चाहते हैं। एक संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से निर्णयन प्रक्रिया एक अविच्छिन्न प्रक्रिया होती है जो वातावरण के साथ अन्योन्यक्रिया करने में संघटित होती है।

यदि हम दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में बात करें तो एक निर्णय हमें इस योग्य बनाता है कि हम अपने अस्तित्व का अनुभव कर सकें, और अतः अपने आत्मन् तथा अपने परिवेश, जिसमें हम रहते हैं, के उत्तरदायित्व को भी अनुभव कर सकें। यह सुग्राहिता हमें हमारे अस्तित्व के अर्थ को समझने में सहायता करती है और आत्मपरितोष का अवसर प्रदान करती है। हम सभी उत्तरदायित्व के साथ चयनाधिकार की स्वतंत्रता का सुख और आनंद प्राप्त करते हैं और जो निर्णय हम लेते हैं वे हमारे व्यक्तित्व को परिभाषित करते हैं।

5.3.2 निर्णयन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक

निर्णयन सम्बन्धी व्यवहार को विभिन्न कारक प्रभावित करते हैं। इनमें से कुछ मुख्य कारक निम्नलिखित हैं:

- **व्यक्ति की अभिरुचियाँ, अभिवृत्तियाँ तथा व्यक्तित्वः** व्यक्तियों के रूप में हम सभी भिन्न–भिन्न होते हैं, इसलिए हमारी रुचियों, अभिवृत्तियाँ इत्यादि भी भिन्न–भिन्न होती हैं जो हमारे द्वारा लिए गए निर्णयों में प्रतिबिम्बित होती हैं। उदाहरणार्थ, एक परियोजना की योजना बनाते समय जो प्रविधियाँ हम अपनाते हैं, वे समूह के नेता की अभिवृत्तियों तथा प्राथमिकताओं का दर्पण होती हैं।

- **निकटस्थ परिवेश (परिवार):** प्रत्येक व्यक्ति का एक संदर्भ होता है जिससे वह जुड़ा रहता है। इसमें उसका निकटस्थ परिवेश (वातावरण) तथा उस परिवेश (परिवार) में उसके लोकाचार सम्मिलित होते हैं जो व्यक्ति की निर्णयन प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जिसका सम्बन्ध पश्चिम बंगाल से है, निर्णय करते समय वह उस प्रदेश की प्ररूपी शैली और प्राथमिकताओं से प्रभावित होगा।

- **सामाजिक परिवेश (समाज, समकक्ष समूह, समुदाय):** हमारी निर्णयन प्रक्रिया उस सामाजिक परिवेश से भी प्रभावित होती है जिसमें हम रहते हैं। उदाहरणार्थ, एक रुढ़िवादी समाज जब लड़कियों के विषय में कोई निर्णय लेता है तो अधिकांशतः वह समाज लड़कियों को व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने की आज्ञा नहीं देता और उनकी शादी छोटी आयु में ही करने पर बल देता है या वह लड़कियों को विद्यालय में एक विशेष प्रकार की वेशभूषा ही पहनने देता है।

- **सांस्कृतिक संदर्भ (मूल्य तथा पूर्वाग्रह):** जब किसी विषय पर हम कोई निर्णय करते हैं तो हम अपनी संस्कृति तथा परंपराओं को ध्यान में रखते हैं। इन्हीं के आधार पर व्यक्ति के अस्तित्व को परिभाषित किया जाता है। इसी प्रकार परंपराओं से जुड़े मूल्य भी हमारे निर्णयों में प्रतिबिंबित होते हैं। उदाहरणार्थ, कई समुदायों या समाजों में विवाहोपरांत माता–पिता की संपत्ति पर लड़कियों का कोई हिस्सा नहीं होता। इसी प्रकार विवाहोपरांत लड़कियाँ अपने पति की उपजाति (गोत्र) अपने नाम के आगे लगाती हैं।

- **व्यावसायिक प्राथमिकताः** व्यवसाय तथा इसके प्रति वचनबद्धता और समर्पण सम्बन्धित उत्तरदायित्व हमारे निर्णयों को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यवसाय व्यक्तियों और वातावरण के गुणात्मक विकास के लिए एक परिप्रेक्ष्य का निर्माण तथा इसका पोषण करता है जो हमारे निर्णयों को प्रभावित करता है।

5.3.3 निर्णयन प्रक्रिया की अवस्थाएँ

जैसा ऊपर विवेचित किया गया है, निर्णयन क्षमता मानव व्यक्तित्व का अभिन्न अंग होती है। एक बच्चे के सम्मुख कुछ स्थितियाँ या कठिनाइयाँ आती हैं और वह स्वाभाविक रूप से निर्णय लेता है या वैकल्पिक चयन करता है। प्रत्येक बार चयन करते समय और निर्णय

लेते समय वह अपनी विचारशीलता का उपयोग करता है और अपने कौशलों और कार्यनीतियों को संशोधित करता है ताकि वे अवस्थिति के अनुकूल हों और बेहतर और अधिक संतोषजनक परिणाम दें। यह स्पष्ट करता है कि ऐसी कोई पूर्व निर्धारित प्रणाली या क्रियाविधि नहीं होती जिसके अनुसार बच्चे विशिष्ट रूप से कोई निर्णय ले सकें। प्रत्येक स्थिति के कुछ विशेष लक्षण होते हैं अतः उससे अद्वितीय या विलक्षण तरीकों से ही निपटा जा सकता है। नीचे विवेचित अवस्थाएँ निर्णय लेने में सम्मिलित प्रक्रियाओं के बोध (समझ) के लिए एक स्थिति–निर्धारण (अभिमुखीकरण- orientation) प्रदान करती हैं। जॉन डिवी, जिन्हें बहुत से लोग आधुनिक अनुभवजन्य अधिगम का जनक मानते हैं, ने अवधारणा अधिगम का एक त्रि–अवस्था प्रतिरूप प्रस्तुत किया। डिवी का प्रतिरूप निर्णयन प्रक्रिया पर संकेन्द्रित है ताकि अतीत के अनुभवों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर यह निर्णय लिया जा सके कि वर्तमान स्थिति में क्या करना चाहिए। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

i) वस्तुगत प्रेक्षण द्वारा स्थिति का अंदाजा लगाना;

ii) ऐसी स्थितियों के विषय में समान पूर्व अनुभवों से (आपके अपने अनुभव हों या आपके परिचित लोगों के) ज्ञान प्राप्त करना;

iii) इस ज्ञान के आधार पर, आगे कैसे चला जाए, इस बात को आंकना या निर्णय करना।

इस सरल से दिखने वाले प्रतिरूप के बहुत गहन निहितार्थ हैं, क्योंकि यह उस प्रक्रिया को स्पष्ट करता है जिससे सहजानुभूत (intuitive) निर्णयन कौशल प्रोत्साहित होते हैं। निर्णयन प्रक्रिया में जो अन्य प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं, जॉन डिवी ने उनके बारे में भी बात की है ये निम्नलिखित हैं:

- **समस्या को परिभाषित करना:** इसका सम्बन्ध समस्या के सभी पक्षों को समझने से है।
- **विकल्पों को ढूँढ़ना:** इसका सम्बन्ध समस्या के संभावित समाधानों से है।
- **परिणामों पर विचार करना:** इस अवस्था का सम्बन्ध अपेक्षित परिणामों के संदर्भ में संभावित समाधानों से है।
- **अपने मूल्य की पहचान करना:** इस अवस्था का सम्बन्ध उस सर्वोत्तम समाधान के चयन से है जो उस स्थिति के बारे में सबसे सही या उचित है।
- **निर्णय करना और उसे कार्यान्वित करके देखना:** इसका सम्बन्ध निश्चित किए गए समाधान के कार्यान्वयन से है।
- **परिणामों का मूल्यांकन करना:** यह अवस्था उपर्युक्त प्रक्रिया का मूल्यांकन करती है कि लिया गया निर्णय उचित था अथवा नहीं।

फिशर (1970) ने इस संदर्भ में चार अवस्थाओं का विकास किया जो निर्णयन प्रक्रिया में सम्मिलित होती हैं। इन अवस्थाओं को प्रावस्था (phase) भी कहा जाता है और ये निर्णयन प्रक्रिया को आरंभ करने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

स्थिति निर्धारण (अभिमुखीकरण) अवस्था (Orientation Stage): यह वह अवस्था है जब व्यक्ति का स्थिति से पहली बार आमना–सामना होता है और वह उसे अधिक स्पष्टता से समझना चाहता है।

द्वंद्व अवस्था (Conflict Stage) : जब एक बार स्थिति से भली भाँति परिचय हो जाए तो इसका विश्लेषण और विवेचन आरंभ होता है।

आविर्भाव अवस्था (Emergence Stage): जब द्वंद्वात्मक स्थिति की विवेचना करते समय और उसका विश्लेषण करते समय कोई अस्पष्ट, धुंधला सा विचार एकदम मन में आता है, जो अंतिम निर्णय के लिए एक संकेत का काम करे, यह आविर्भाव अवस्था कहलाती है।

प्रबलन अवस्था (Reinforcement Stage) : सभी पक्षों का विश्लेषण करने के पश्चात् और निर्णय के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझने के पश्चात् निर्णय लिया जाता है।

अपनी कक्षा में आपने ऐसे बच्चों को देखा होगा जिन्हें गणित के प्रश्न हल करने में कठिनाई होती है। आपने ऐसे बच्चों की पहचान कैसे की? कई बार कक्षा की परीक्षा लेकर तथा कई बार गृहकार्य सम्बन्धी क्रियाकलाप द्वारा। यह अवस्था **स्थिति–निर्धारण अवस्था** है, जहाँ आप समस्या को ज्ञात करते हैं तथा विद्यार्थी को इससे अवगत कराते हैं। तत्पश्चात्, आप इस वास्तविक समस्या का विश्लेषण करते हैं और आपको पता चलता है कि इसका गृहकार्य तो इसके माता–पिता कर देते हैं, वह स्वयं नहीं करता/करती। इस बात की चर्चा जब आप बच्चों के माता–पिता से करते हैं, तो यह अवस्था **द्वंद्व अवस्था** कहलाती है। इन चर्चाओं के माध्यम से कई बार कोई अस्पष्ट सा मत उभर कर आता है; जैसे कि बच्चे को अपना गृहकार्य स्वयं ही करना चाहिए और माता–पिता का कार्य केवल शंकाओं को स्पष्ट करना ही होना चाहिए। यह अवस्था **आविर्भाव अवस्था** है। अन्त में प्रबलन अवस्था में अध्यापक बच्चे की सराहना कर सकते हैं, उसे शाबासी दे सकते हैं, केवल उस स्थिति में जब बच्चा बिना अशुद्धि किए कक्षा में प्रश्न को सही ढंग से हल कर दें। क्योंकि बच्चा अपनी कक्षा या अधिगम में एक उत्तरदायी बन गया है।

यह स्पष्ट करता है कि बच्चे पहले किसी समस्या का सामना करते हैं, वे उसे सभी पक्षों की दृष्टि से समझने का प्रयास करते हैं। समस्या को पहचानने या समझने के पश्चात् व्यक्ति उपलब्ध विकल्पों तथा समस्या को सुलझाने की संभावना के विषय में सोचता है और विस्तृत विश्लेषण के पश्चात् सर्वोत्तम विकल्प को छाँट लिया जाता है। यह प्रक्रिया चलती रहती है और बच्चे समझदार और उत्तरदायी व्यक्ति बन जाते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: (क) अपने उत्तरों को दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

(ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

i) निर्णय लेने सम्बन्धी अपने दायित्व को हम कब और क्यों समझते हैं?

....

....

....

....

ii) डिवी के अनुसार निर्णयन प्रक्रिया में कौन–से चरण सम्मिलित होते हैं?

....

....

....

....

iii) वे कौन–से विभिन्न कारक हैं जो हमारे निर्णयों को प्रभावित करते हैं?

....

....

....

....

5.4 निर्णयन सम्बन्धी व्यवहार के पोषण में अध्यापक की भूमिका

एक अध्यापक के रूप में बच्चों की निर्णयन सम्बन्धी योग्यता के पोषण करने में आप एक महत्वपूर्ण सुसाध्यकर्ता हो सकते हो। एक सुसाध्यकर्ता के रूप में आपको चाहिए कि बच्चों को सभी प्रकार की सुविधाएँ तथा सहायता प्रदान करें। स्वतंत्र चिंतन के लिए आवश्यक स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए। अतः बच्चों को निर्णय लेना सिखाने की प्रक्रिया में अध्यापक एक सलाहकार तथा मार्गदर्शक है न कि एक निदेशक। एक अध्यापक के रूप में आपका कर्त्तव्य यह है कि आप बच्चों को आत्मनिरीक्षण या आत्मविश्लेषण करने और पहल करने के लिए अपनी क्षमता को साकार करने के लिए सशक्त बनाएँ। एक प्रभावी अध्यापक के नाते आपको निम्नलिखित प्रकार्य संपादित करने चाहिए:

- बच्चों को स्वतंत्र चिंतन के लिए अवसर प्रदान करना।
- जहाँ उन्हें स्वयं सोचने की और नए विचार उत्पन्न करने की आवश्यकता हो, उन्हें ऐसी यथेष्ट परियोजना देनी चाहिए। उदाहरणार्थ, वे किसी समसामयिक सामाजिक विषय को ले सकते हैं और वर्तमान स्थिति में सुधार लाने के लिए सुझाव दे सकते हैं।
- बच्चों में नेतृत्व की क्षमता के विकास के लिए उनकी सहायता करें।
- कक्षा में छोटे समूह बनाएँ जिनमें प्रत्येक का एक नेता हो और उनकी नेतृत्व की क्षमता को साकार करने में बच्चों की सहायता करें।
- पहल करने की अभिवृति तथा उपयुक्त जोखिम उठाने के व्यवहार को प्रोत्साहन करें।
- बच्चों को मौलिक चिंतन विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करें, न कि मात्र पूर्व निर्धारित निर्देशनों पर ही काम करने के लिए प्रोत्साहित करें।
- ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करें जिनमें एक–दूसरे के प्रति सद्‌भाव को प्रोत्साहन मिले।
- समूह में मैत्रीभाव सा सामंजस्य विकसित करना, जहाँ बच्चे एक–दूसरे का सम्मान करें, एक–दूसरे को स्वीकार करें और पारस्परिक विश्वास और भरोसा बढ़े।
- अपने प्रति, दूसरों के प्रति तथा समाज के प्रति उत्तरदायित्व की भावना में विकास हो।
- जब बच्चों को कोई उत्तरदायित्व सौंपा जाए तो वे अपने आपको इसके लिए सर्वाधिक योग्य सिद्ध करें। अतः बच्चों को विद्यालय और समाज से सम्बन्धित विषयों पर सोचने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति में परिचर्चा समूह तथा क्लब आदि काफी सहायक हो सकते हैं।

क्रियाकलाप 1

i) बिना किसी निर्देश के बच्चों को स्वतंत्र और अलग–अलग शीर्षक दिए जाएँगे ताकि वे उन्हें आप तैयार करें और कक्षा में प्रस्तुत करें।

ii) कक्षा में उपयुक्त स्थिति का निर्माण करें और विद्यार्थियों को इस पर निर्णय लेने दें, जैसे मान लीजिए, यहीं–कहीं कोई बम रखा हुआ है, आप क्या करेंगे?

iii) ऐसे विषयों जैसे 'भारत में जनसंख्या समस्या', 'पर्यावरण प्रदूषण – समस्याएँ' तथा 'उत्तरदायित्व' पर समूह नियत कार्य दिए जा सकते हैं।

5.5 समस्या–समाधान

समस्या–समाधान (Problem-solving) करना एक ऐसी विधि है जिसमें बच्चों की इस प्रकार सहायता की जाती है कि वे किसी अवांछित, अप्रिय तथा अरुचिकर स्थिति से एक अभीष्ट (वांछित) तथा रुचिकर स्थिति की ओर प्रेरित हों। इस घटना को समझने के लिए आइए सुकेश के जीवन में झाँक कर देखें। 14 वर्ष के एक बालक सुकेश ने गणन की मूल विधियाँ सीख ली हैं और वह उनका उपयोग अपने दैनिक अनुभवों में कर सकता है। नए–नए तरीकों की खोज कर वह सामान्य समस्याओं को हल कर सकता है और उनका अनुप्रयोग विभिन्न स्थितियों में कर सकता है जब वह ऐसी क्रियाएँ करता है तो मुस्कराता है, प्रसन्नता से चिल्लाता है, खुश होता है तथा आनंद लेता है। एक दिन अचानक जब वह एक थोड़ी कठिन और नई समस्या को हल कर रहा था, उसे एक कठिनाई अनुभव हुई, उसने काफी प्रयास किया परंतु सफलता नहीं मिली। वह दुखी हो गया और उसे थोड़ा गुस्सा भी आया; पर कुछ नहीं हुआ। उसने किसी से कोई सहायता लेने का विचार किया कि आसपास बैठा कोई वरिष्ठ व्यक्ति उसकी सहायता कर दे। उसने अपने मित्र गिरीश को पुकारा, परंतु उससे उसका संपर्क नहीं हो पाया। सुकेश के पास मार्गदर्शन के लिए, और कोई सहायता या सहारा नहीं था। वह दुखी हो गया और व्यथित भी। वह नीचे मुँह लटकाकर निराशा से बैठ गया।

जैसे ही उसने अपनी आँखें मूँदी और जो कुछ हुआ था, उसका पुनरावलोकन किया; सुकेश ने "समस्या" को एक समग्र रूप में पुनः सोचा; उसने उन विभिन्न तरीकों को याद करने का प्रयास किया जो इस समस्या के समाधान में उसके काम आ सकते हैं। उनका प्रयोग करके देखा। परंतु वे भी काम न आ सके। अब उसने ध्यान से एक नए दृष्टिकोण से स्थिति को पुनः आंका, कुछ निर्णय लिया और समर्थन के लिए इधर–उधर देखा, परंतु वहाँ कोई नहीं था। उसने समस्या का समाधान करने के लिए अलग–अलग विकल्पों का परीक्षण करके देखा परंतु उनसे भी काम नहीं बना; और वह उदास और निरुत्साहित हो गया। फिर वह कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा और अपना कार्य फिर से आरंभ कर दिया। इस बार उसने अपना काम नई और परिष्कृत विधि द्वारा आरंभ किया; और उनमें से कई विधियों को जिन पर वह पहले काम कर रहा था, मिला लिया, उसने अपने प्रयास जारी रखे और अचानक उसके एक अनुमान से कुछ उत्साहजनक परिणाम दिखने आरंभ हुए, और अन्त में उसने समस्या को हल कर दिया। वह विस्मित था, दोबारा समस्या को देखा, दोबारा हल किया। वह खुश था और उत्तेजित भी, क्योंकि उसने बाधा को पार कर लिया था जो उसकी समझ को अवरुद्ध किए हुए थी। अब वह खुश है और अपनी क्रिया को उसी उत्साह और प्रेरणा से कर रहा है। हमें विश्वास है कि यदि इस प्रकार की कोई बाधा उसके पास पुनः आएगी वह इसका तरीका ढूँढ़ लेगा और आगे बढ़ेगा।

यह स्थिति एक स्वाभाविक स्थिति है और हमारे अनुभव से जुड़ी है। हमने बच्चों को घरों में बड़े होते देखा है और उनके वे व्यवहार प्रतिरूप भी देखें हैं जब वे प्रति क्षण कोई नई

खोजों का आनंद लेते हैं और उन नई समस्याओं से निपटते हैं जो उनके स्वाभाविक विकास को बाधित करती हैं।

उपर्युक्त स्थिति में सुकेश स्वाभाविक रूप से एक जिज्ञासु बालक है और समस्याओं को अपने सहज व्यवहार से हल करना सीख रहा है। परंतु अचानक वह एक नई परिस्थिति में फंस जाता है जो उसके नियमित स्थाई (अभ्यसित) पर्यावरण और अधिगम शैलियों का अंग नहीं है। अतः वह अपने प्राकृतिक जिज्ञासु व्यवहार के द्वारा नए वातावरण को जानने का प्रयास करता है। आइए, इसके व्यवहार प्रतिरूपों को उन प्रेक्षणीय क्रियाओं द्वारा विश्लेषित करने का प्रयास करें जो उसने अपनाए:

- सुकेश के स्वाभाविक अधिगम व्यवहार में बाधा पड़ी है अतः वह स्वयं भी विक्षुब्ध हो गया है।
- सुकेश का प्रथम प्रयास था किसी बाह्य सहायता की तलाश करना क्योंकि अब तक यह उसकी आदत का भाग था (जब भी कोई समस्या आई उसके माता–पिता ने सहायता या समर्थन दिया)।
- क्षुब्धता के कारण वह व्याकुल या उदास था।
- उसने विभिन्न उपलब्ध विकल्पों की तलाश की, जैसे अपने बड़ों की ओर सहायता के लिए देखा, विभिन्न सीखी गई व जानी गई विधियों को आजमा कर देखा। किसी विधि को दूसरे रूप में आजमाया; समस्या को समग्रता में देखा और सुनिश्चित किया कि उसने प्रश्न के किसी तत्व की उपेक्षा नहीं की। उसने पुरानी विधियों को मिलाया, सीखे हुए विभिन्न सूत्रों के संयोजनों का प्रयास किया जिनमें एक में उसे सफलता मिली।
- अन्त में प्रश्न को हल करने में उपयुक्त विधि का पता लगाने में सुकेश सफल हुआ।
- सफलता मिलने के पश्चात् उसे अत्यंत खुशी हुई।
- सुकेश ने समस्या से निपटने की एक विधि सीख ली और अब वह इस अनुभव को समान प्रकार की अन्य समस्याओं को हल करने में अंतरित कर सकता है।

उपर्युक्त उदाहरण समस्या–समाधान व्यवहार को समझने की प्रक्रिया की व्याख्या करता है। इस विधि की परिभाषा डिवी महोदय ने दी जहाँ उन्होंने जीवन की समस्याओं के प्रति व्यक्तिगत उपागम को स्पष्ट किया। सुकेश के दृष्टांत ने समस्या–समाधान से सम्बन्धित दो मुख्य बिन्दुओं को प्रकट किया। वे हैं: (i) निरंतरता (continuity) का सिद्धांत, और (ii) स्थिति अनुकूल (situational) अन्योन्यक्रिया। आइए, इन दो बिन्दुओं को विस्तार से जानें।

निरंतरता के सिद्धांत का अर्थ है कि सभी स्थितियों में एक साझा सूत्र होता है जो सम्बन्ध स्थापित करने और उससे जुड़ने में बच्चे की सहायता करता है। प्रत्येक स्थिति के कुछ तत्व होते हैं, जो दूसरी स्थितियों में भी हो सकते हैं। यह बात समाधान ढूँढ़ने में बच्चे की सहायता करती है। उदाहरण के लिए, उपर्युक्त उदाहरण में, नई समस्या जिसका हल ढूँढ़ना था, वह अलग–अलग संदर्भों में अलग–अलग प्रतीत हो रही थी। नई स्थिति से निपटने में सीखी हुई और अनुभूत विधियों की वज़ह से एक कड़ी जुड़ी जिससे कार्य को समझने और उसका हल ढूँढ़ने में सहायता मिली।

स्थिति अनुकूल अन्योन्यक्रिया में व्यक्ति विभिन्न स्थितियों से अन्योन्यक्रिया करता रहता है। विभिन्न स्थितियों के घटक एक संदर्भ का निर्माण करते हैं जो एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। यह अन्योन्यक्रिया समस्या के समाधान के लिए सुग्राहिता और अन्तर्दृष्टि के विकास में सहायक होती है। उपर्युक्त स्थिति में सुकेश अपने आपको एक अच्छा विद्यार्थी सिद्ध करने के लिए परिश्रम करता गया। अपने प्रयासों से वह खुश हुआ जो विषय में

उसकी सच्ची रुचि और इस मेहनत को कायम रखने और सशक्त करने सम्बन्धी उसके उत्तम आशय को स्पष्ट करता है। इस प्रकार से अनुभव परिपक्व होते जाते हैं और यह बच्चे में समस्याओं से निपटने की क्षमता का विकास कर देते हैं। यह अनुभव स्पष्ट करता है कि जब भी कोई समस्या–स्थिति उत्पन्न होती है, उसका समाधान ढूँढ़ने के लिए हमें कुछ क्रियाविधियों का अनुसरण करने की आवश्यकता होती है। जाँच के प्रतिरूप में डिवी ने समस्या–समाधान की प्रक्रिया में कुछ विशेष चरणों का विवेचन किया है। नीचे दिए गए भाग में हम इन चरणों पर चर्चा करेंगे।

5.5.1 समस्या–समाधान प्रक्रिया के चरण

ये चरण निम्न प्रकार हैं:

- **अस्पष्ट स्थिति (Indeterminate Situation)** : यह प्रथम अवस्था होती है जब हम जीवन में समस्याओं का सामना करते हैं। हममें से प्रत्येक को किसी न किसी रूप में विपरीत स्थितियों का सामना करना पड़ता है, जो आगे बढ़ने में हमारे रास्ते में रुकावट पैदा करती हैं। ये समस्याएँ किसी भी प्रकार की हो सकती हैं जैसे, व्यवहार सम्बन्धी मुद्दे, सामाजिक समायोजन सम्बन्धी, शैक्षिक समस्या, इत्यादि। उपर्युक्त स्थिति में बाधा यह थी कि सुकेश एक समस्या का हल ढूँढ़ने में असफल था।

- **समस्या का सूत्रीकरण (formulation of the problem)** : कोई भी स्थिति गुप्त रूप से समस्यात्मक होती है जब तक कि विवेक द्वारा इसे स्पष्ट नहीं किया जाता। महत्वपूर्ण बात यह है कि समस्या को इस प्रकार परिभाषित करें और समझें कि स्थिति सभी प्रकार से स्पष्ट हो जाए। समस्या को इतने स्पष्ट रूप में व्यक्त करना होता है कि इस की जाँच वैज्ञानिक ढंग से हो सके। उपर्युक्त काल्पनिक दृष्टांत में सुकेश इसलिए विक्षुब्ध था कि उसके प्राकृतिक संज्ञानात्मक विकास में यह समस्या विद्यमान थी और जिसका समाधान वह नहीं कर पा रहा था। अतः वह बैठ गया और समस्या की ध्यान से जाँच करने लगा तथा इसके अतिरिक्त उसने समस्या को समग्र रूप में भी समझने का प्रयास किया।

- **संभावित समाधान ज्ञात करना (Determining the probable solutions)** : जब समस्या को अच्छी प्रकार सूत्रित कर दिया जाता है तो परिकल्पनाओं के रूप में उसके संभावित समाधानों की रूपरेखा प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। वस्तुतः जिस रूप में समस्या सूत्रित की जाती है, उससे ही संभावित समाधान दिखने लगते हैं। जैसा आपने देखा, सुकेश ने समस्या को हल करने के लिए अपनी स्वाभाविक संज्ञानात्मक शैली और क्षमता के अनुसार विभिन्न तरीकों को आजमाया, जैसे, उसने अपने विवेक का प्रयोग करते हुए इस पर कार्य आरंभ किया, बड़ों की ओर सहायतार्थ और अपनी क्रियाविधि के समर्थन के लिए देखना इत्यादि।

- **तर्कणा (Reasoning)** : संभावित समाधान निर्धारण के पश्चात्, परिकल्पनाओं के व्यावहारिक अर्थ, तात्पर्य या दावों का परखा जाता है। परिकल्पना की प्रभावशालिता को संगत तथ्यों के प्रकाश में मापा जाता है। विद्यार्थी द्वारा निर्धारित सभी विकल्प समस्या के समाधान से सम्बन्धित होते हैं और बच्चे की आयु और व्यवहार प्रतिरूपों के अनुरूप होते हैं।

- **प्रयोगीकरण (Experimentation)** : प्रयोगीकरण में समस्या–समाधान की योजना या विधि क्रियान्वित की जाती है जो विशेष रूप से यह जानने के लिए अभिकल्पित की जाती है कि परिकल्पना का निर्माण कितनी अच्छी प्रकार से किया गया है। बच्चा समस्या के समाधान के लिए अपनी क्रियाविधि या योजना को संपादित करता है।

इसके लिए वह समस्या के समाधान के लिए सूत्रों के विभिन्न संयोजनों के अपने अनुमान या विचार पर प्रयोग करके देखता है।

- **प्रामाणिक निश्चयन (Warranted Assertion)** : यदि योजना सफल होती है और समस्या का समाधान मिल जाता है तो विभ्रम की स्थिति समाप्त हो जाती है और इससे एक सुव्यवस्थित विभ्रम–रहित स्थिति का निर्माण हो जाता है। इससे तथ्यों, विचारों तथा संकल्पनाओं के रूप में ज्ञान का सृजन भी होता है जो उन परिकल्पनाओं के निहितार्थ हैं। बच्चा समस्या–समाधान के पश्चात् मुस्कान के साथ सीखने की अपनी स्वाभाविक इच्छा को पुनः प्राप्त कर लेता है जो बच्चे की प्रसन्नता का कारण है। क्योंकि अब स्वाभाविक वृद्धि सुनिश्चित हो गई है और बच्चा इस प्रकार की भावी समस्याओं से निपटने में सक्षम हो गया है।

अतः समस्या–समाधान का सम्बन्ध इच्छा की उस दशा से है जो व्यवस्था में व्याप्त असंतोष के कारण और व्यवस्था में सुधार लाने और उसे परिष्कृत करने की भावना से प्रारंभ हुई है।

समस्या–समाधान में अभिसारी (Convergent) तथा अपसारी (divergent) चिंतन

मनोवैज्ञानिक गिल्फर्ड (1967) का मानना है कि समस्या–समाधान व्यवहार अभिसारी चिंतन के कारण संभव होता है। उसके अनुसार अभिसारी चिंतन ऐसा चिंतन होता है जिसमें समस्या का एक अकेला सुस्थापित सही उत्तर प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। उसका उद्देश्य किसी प्रश्न का एक अकेला सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक सही उत्तर प्राप्त करना होता है।

अभिसारी चिंतन का उपयोग प्रायः अपसारी चिंतन के साथ जोड़कर किया जाता है। अपसारी चिंतन विशेषतः एक सहज (स्वाभाविक), स्वतंत्र रूप से प्रवाही रूप में घटित होता है जहाँ बहुत सारे सृजनात्मक विचार आते हैं और उनका मूल्यांकन किया जाता है। थोड़े ही समय में बहुत सारे संभावित उत्तरों की खोज कर ली जाती है और अप्रत्याशित सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। जब अपसारी चिंतन की प्रक्रिया संपूर्ण हो जाती है, विचार और सूचना को व्यवस्थित और संरचित कर लिया जाता है जिसमें एक अकेला सर्वश्रेष्ठ या सर्वोचित उत्तर प्राप्त करने के लिए अभिसारी चिंतन का प्रयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: (क) अपने उत्तरों को दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

(ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

i) ऐसे अनुभव को याद कीजिए जहाँ आपने अचेतन रूप से समस्या–समाधान विधियों का उपयोग किया हो और समस्या का समाधान कर दिया हो। इस समस्या में प्रयुक्त कार्यनीति और उस स्थिति का विश्लेषण करें।

....

....

....

ii) आपके विचारानुसार समस्या–समाधान के विभिन्न चरण कौन–से हो सकते हैं?

....

....

....

5.5.2 समस्या–समाधान सम्बन्धी व्यवहार के पोषण में अध्यापक की भूमिका

बच्चों में समस्या–समाधान की क्षमता के निर्माण में और उन्हें प्रभावी रूप से सीखने में शिक्षा की एक मुख्य भूमिका होती है। इस संदर्भ में निम्नलिखित बिन्दु आपके लिए विचारणीय हैं:

- समाज में बच्चा क्रियाकलाप तथा गति व चेष्टा के माध्यम से सीखता है। अतः यह अपेक्षित है कि बच्चे को जानकारी स्वयं ढूँढ़ने देनी चाहिए न कि ज्ञान को उस पर थोप या उड़ेल दिया जाए या मस्तिष्क में भर दिया जाए।
- बच्चों को जीवन के तथ्यों की खोज करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- बच्चों द्वारा अनुभव को विश्लेषित करने तथा उसे विभिन्न स्थितियों में परखने के लिए प्रयोगात्मक विधि काफी सहायक होती है। इससे बच्चे जीवन की विभिन्न समस्याओं का प्रभावी ढंग से समाधान कर सकते हैं। बहुत सारे विचारों/संकल्पनाओं का अर्थ सर्वोचित ढंग से उन्हें प्रयोगों द्वारा जाँचने तथा परिणामों को देखने से खोजा जा सकता है, क्योंकि ये विचार ही हैं जो हमारे कार्य की योजनाएँ हैं।
- समस्या का हल ढूँढ़ने के लिए प्रयुक्त विधियों द्वारा बच्चों में विमर्शक चिंतन का विकास होना चाहिए। अतः बच्चे को किसी समस्या का समाधान ढूँढ़ते समय विवेचित रूप से सोचने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

एक अध्यापक के रूप में आपको समूह क्रियाकलाप का नेता होना चाहिए। आापको बच्चे के व्यक्तित्व को निष्प्रभावी नहीं करना चाहिए, बल्कि अध्यापन–अधिगम स्थिति की व्यवस्था इस प्रकार की जाए कि बच्चे अपने अधिगम अनुभवों तथा समस्या या कठिनाई का हल निकालने के अवसरों का प्रयोग प्रभावी रूप से कर सकें। और इस प्रकार वे जीवन के सामंजस्य का आनंद ले सकें।

संभवतः यह निम्नलिखित तरीकों से संपादित किया जा सकता है:

- बच्चों को स्वतंत्र रूप से तथा समूह में काम करने के अवसर प्रदान करके बच्चों को संवेदनशील, सुग्राही तथा सच्चे होने के लिए प्रोत्साहित करना। सुग्राहिता का अर्थ है समस्या या कठिनाई का अनुभव करना, और सच्चाई का अर्थ है समस्या के साथ वचनबद्धता और लगातार प्रयास करना।
- बच्चों की पहलशक्ति तथा प्रयासों तथा अन्य व्यवहारगत प्रवृत्तियों को स्वीकार कर बच्चों को सम्मान देकर उनमें विश्वास जगाना।
- समस्याओं के समाधानों के पहले से बने बनाए उत्तर/विचार न देना।
- यदि बच्चा किसी समस्या को पहले प्रयास में हल नहीं कर पाता है तो उसे समस्या पर दोबारा विचार करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- स्थिति को परिभाषित करने और विश्लेषित करते समय परदे की पीछे से मार्गदर्शन करना।
- जब बच्चे समस्या के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करने के रूप में जटिल समस्याओं पर काम करें तो उन्हें सहायता देना।
- दूसरों के दृष्टिकोण में भागी होने और उनका सम्मान करने के मूल्य को प्रोत्साहित करना।

- समस्या के समाधान के लिए रुढ़िबद्ध धारणाओं को हतोत्साहित करना।
- सामूहिक परियोजनाओं के लिए अवसर प्रदान करना, क्योंकि इससे समूह जीवन में सहयोग बढ़ता है।
- अधिगम की एक विधि के रूप में परिचर्चा का प्रयोग करना ताकि समुदाय में सामूहिक चिंतन को तथा अधिगम को प्रोत्साहित किया जा सके।

5.6 सारांश

द्वंद्व एक ऐसी स्थिति को कहते हैं जहाँ विभिन्न विकल्प सम्मिलित हों और वे या तो समान रूप से सुगम्य हों या समान रूप से वर्जनीय या परिहार्य हों, और उनमें हमें एक विकल्प को चुनना ही हो और अपने आप इस पर निर्णय लेना हो। इस प्रकार प्रस्तुत स्थिति का सम्बन्ध संज्ञानात्मक, सामाजिक, नैतिक और यहाँ तक कि राजनीतिक पक्ष से हो सकता है। उदाहरण के लिए, आप को राज्य विधान सभा चुनाव में अपने मताधिकार का प्रयोग करना है। यह संभव है कि जितने उम्मीदवार खड़े हैं उनमें से आपको कोई भी पसंद न हो। ऐसी स्थिति में आप अपना मत डालने सम्बन्धी निर्णय कैसे ले सकते हैं और किसके पक्ष में। इस प्रकार की निर्णयन प्रक्रिया में कुछ निश्चित चरण होते हैं। इनमें कुछ नीचे दिए गए हैं:

- समस्या को समझना।
- समस्या के विभिन्न आयामों की व्याख्या करना तथा उनका विश्लेषण करना।
- विभिन्न संभावित क्रियाओं का मूल्यांकन करना जिसमें विभिन्न संदर्भगत, सामाजिक तथा वैयक्तिक पूर्वाग्रहों को समझाया गया हो।
- लिए गए निर्णय पर पुनः दृष्टिपात करना और इस प्रकार यह भावी निर्णयों के लिए एक संदर्भ बिन्दु बन जाएगा।

इस संदर्भ में अध्यापक की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण बन जाती है क्योंकि उससे अपेक्षा है कि वह अध्यापन में ऐसे अवसर प्रदान करे और विद्यार्थियों को विभिन्न क्रियाकलापों में अपने आप निर्णय लेने दे तथा उन्हें अपने निर्णयों का उत्तरदायित्व भी लेने दें।

हममें से प्रत्येक के सम्मुख कभी न कभी समस्याएँ आती हैं जिनका समाधान करना हमारे लिए अनिवार्य हो जाता है। हमारे सम्मुख आई समस्याओं का सम्बन्ध हमारे शैक्षिक, भावात्मक या सांवेगिक, तथा सामाजिक क्षेत्र से हो सकता है। समस्या किसी प्रकार की हो परंतु उसके समाधान के लिए हम निश्चित प्रविधि का प्रयोग करते हैं। शोध के आधार पर यह स्पष्ट हुआ है कि किसी समस्या–समाधान के लिए निम्नलिखित चरण लाभदायक सिद्ध हुए हैं:

- समस्या की पहचान करना।
- समस्या को परिभाषित करना।
- समस्या के विभिन्न संभावित हल ढूँढ़ना (परिकल्पनाएँ)।
- सर्वाधिक उत्तम समाधान को चुनना।
- समाधान का मूल्यांकन करना।

अध्यापक को चाहिए कि वह कक्षा में ऐसी स्थितियों का निर्माण करे और अवसर प्रदान करे ताकि बच्चे विभिन्न समस्या–समाधान परियोजनाओं में लगे रहें और उनके समाधान

प्रयत्नों द्वारा स्वयं ढूँढ़ें। इस इकाई में एक दूसरी अवधारणा जिसकी चर्चा की गई है वह है निर्णयन प्रक्रिया। हमारे दैनिक जीवन में हमें ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसमें किसी प्रकार की द्वंद्व या धर्मसंकट उपस्थित होता है। द्वंद्व क्या होता है और इससे कैसे निपटा जाए इस पर भी इस इकाई में चर्चा की गई है।

5.7 इकाई के अंत में अभ्यास

1) एक अध्यापक के रूप में बच्चों को निर्णयन करना सिखाने के लिए आपने बच्चों के सहायतार्थ क्या कार्यनीतियाँ प्रयुक्त की हैं?

2) किसी भी एक समस्यात्मक स्थिति को लिखें जिसका सामना आपने कक्षा में अध्यापन करते समय किया है। उस स्थिति से आप कैसे निपटे।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) i) जब हमारे सम्मुख अधिक विकल्प हों तो हम निर्णय लेने के अपने उत्तरदायित्व को अनुभव करते हैं। एक मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य से व्यक्तिगत निर्णय प्रायः आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं और मूल्यों के संदर्भ में लिए जाते हैं। संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य से निर्णयन प्रक्रिया एक सतत् प्रक्रिया मानी जाती है।

   ii) निर्णयन प्रक्रिया के विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं (डिवी के अनुसार):

   – समस्या को परिभाषित करना

   – विकल्पों की व्याख्या करना

   – परिणामों पर विचार करना

   – अपने मूल्य को पहचानना

   – निर्णय लेना और उनको प्रयोग में लाकर देखना

   – परिणामों का मूल्यांकन करना

   iii) हमारे निर्णयों को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक

   – व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ, अभिरुचियाँ तथा उसका व्यक्तित्व

   – निकटस्थ परिवेश

   – सामाजिक परिवेश

   – सांस्कृतिक संदर्भ

   – वृत्तिक (व्यावसायिक) प्राथमिकता

2) i) किसी समस्या का समाधान करने में जो स्थिति और कार्यनीति आपने अपनाई है, उसे लिखें।

   ii) हाँ, आत्मबोध विकास सम्बन्धी अभ्यास करने के पश्चात्, व्यक्ति अपने संवेगों को संचालित करना सीख जाता है।

3) i) कुत्तों के प्रति भय के कारण

   ii) – समस्या की पहचान करना

– समस्या का विश्लेषण करना

– इसका समाधान करने के लिए कार्यनीतियों को मालूम करना।

5.9 उपयोगी अध्ययन सामग्री

ब्राउर, रॉबर्ट ई. एवं ब्रेडली वी. बाल्च. (2005). ट्रांसफॉरमेशनल लीडरशिप एंड डिसिजन–मेंकिंग इन स्कूल्स, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड।

डिवी, जॉन (2008), डेमोक्रेसी एंड एजुकेशन, यूएसए : वाइल्डर पब्लिकेशन्स।

गिलफर्ड, जे.पी. (1967), *दी नेचर ऑफ ह्यूमन इंटलीजेंश,* न्यूयार्क : मैकग्रा हिल।

मॉर्गन, किंग एवं रोबिन्सन, (1979), *इंट्रोडक्शन टू साइकोलॉजी,* न्यू यार्क : मैकग्रा हिल।

वुलफॉल्क, अनीता, (2004), *एजुकेशनल साइकोलॉजी,* नई दिल्लीः पीयरसन एजुकेशन।

जुरीला, थॉमस जे.डी. एवं नेज़्यू, अर्थर, एम. (2007), *प्रोब्लम–सोलविंग थेरेपी – ए पॉजीटिव एप्रोच टू क्लिनिकल इंटरवेंशन,* न्यूयार्क : स्प्रिंगर पब्लिशिंग कम्पनी, एल एल सी।